ओ३म्

एक प्रति मूल्य : रु० 4.00

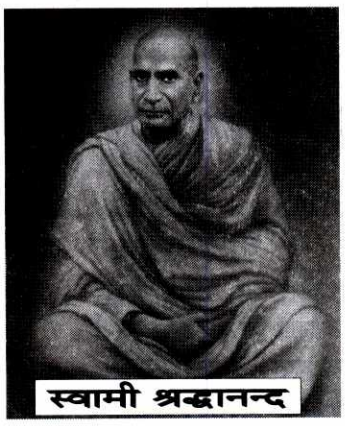

शुद्धि समाचार

सन् 1923 में स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा स्थापित

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा का मासिक मुखपत्र

वर्ष 36 अंक 9

"शुद्धि ही हिन्दू जाति का जीवन है"

वार्षिक शुल्क : 50 रुपये
आजीवन शुल्क : 300 रुपये

सितम्बर, 2013 विक्रम सम्वत् 2070 भाद्रपद-आश्विन सनातन धर्मी नेता - पं. मदनमोहन मालवीय

दूरभाष : 011-23847244

परामर्शदाता : श्री हरबंस लाल कोहली ☼ श्री विजय गुप्त ☼ श्री सुरेन्द्र गुप्त ☼ प्रबन्धक : श्री नरेन्द्र मोहन वलेचा

प्राणों की ऊर्जा और यशस्विता

- प्रो. (डॉ.) सुन्दरलाल कथूरिया, डी.लिट्.

मनुष्य का जीवन श्वास-प्रश्वास पर टिका है, प्राणों पर टिका है। जब तक श्वास आ-जा रहे हैं, मनुष्य जीवित है और जब श्वास रुक जाते हैं, मनुष्य का जीवन समाप्त हो जाता है। वह कोई भी काम नहीं कर सकता। सभी इन्द्रियों के ज्यों-के-त्यों होते हुए भी, प्राण-शक्ति के बिना, वे अपना-अपना काम नहीं कर सकती, मनुष्य कोई काम नहीं कर सकता। प्राणों के निकलते ही मनुष्य को मृत घोषित कर दिया जाता है, उसके शरीर का कोई मूल्य नहीं रहता। हिन्दू (आर्य) उसे जला देते हैं, मुसलमान दफना देते हैं, पर घर में कोई नहीं रखता। वैदिक और श्रेष्ठ परम्परा मृतक को अग्नि में भस्म करने की ही है। वेद भगवान् का स्पष्ट आदेश है: 'भस्मान्त ः शरीरम्' (यजुर्वेद, 40/15) अर्थात् शरीर की अन्तिम परिणति उसके भस्म होने में ही है। स्पष्टतः शरीर का महत्त्व प्राणों के साथ है, निष्प्राण शरीर का, विशेषकर मनुष्य के शरीर का कोई मोल नहीं।

प्राणों के महत्त्व को ध्यान में रखकर वैदिक ऋषियों ने प्राणों को बलशाली और यशस्वी बनाने की प्रभु से प्रार्थना की है। इसीलिए संध्या के मन्त्रों में 'ओं प्राणः प्राणः का समावेश किया गया है। प्रातः सायं संध्या करते समय भक्त-साधक ईश्वर से प्रार्थना करता है कि हे प्रभु! मेरे प्राण वास्तविक अर्थों में प्राण हों अर्थात् वे बलशाली, पवित्र और यशस्वी हों। ध्यातव्य यह है कि प्रार्थना के साथ पुरुषार्थ भी आवश्यक है और पुरुषार्थ या प्रयत्न तो साधक को स्वयं करना है। प्रार्थना पुरुषार्थ के साथ मिलकर ही फलवती होती है। अब विचारणीय यह है कि प्राण बलशाली, ऊर्जस्वी, पवित्र और यशस्वी कैसे बनेंगे? साधक कौन से ऐसे काम करे कि जिनसे उक्त उद्देश्यों की सिद्धि हो जाए, प्राण वस्तुतः प्राण बन जाएँ और मनुष्य का जीवन सार्थक हो जाए।

प्राणों को बलशाली बनाने का सर्वोत्तम साधन है प्राणायाम। यम, नियमों का सम्यक् प्रकार से पालन करने के उपरान्त आसन को सिद्ध करने का प्रयास करना चाहिए, तदुपरान्त अच्छे प्रकार से आसन लगाकर प्राणायाम करना चाहिए। श्वास-प्रश्वास की गति को यथाशक्ति रोकने का नाम प्राणायाम है। बाहर से अन्दर की ओर ली जाने वाली वायु का नाम श्वास और अन्दर से बाहर की ओर छोड़ी जाने वाली वायु का नाम प्रश्वास है। प्राणायाम किसी अनुभवी गुरु से सीखकर ही करना चाहिए, अन्यथा हानि की संभावना हो सकती है। योगदर्शन में प्राणायाम के जिन चार प्रकारों का उल्लेख है, वे हैं-बाह्य, आभ्यान्तर, स्तम्भवृत्ति और बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी। महर्षि दयानन्द ने भी 'सत्यार्थ प्रकाश' में प्राणायाम के इन्हीं चार प्रकारों का उल्लेख किया है। प्राणायाम के इन प्रकारों का उत्तरोत्तर अभ्यास करना चाहिए अर्थात् पहले बाह्य प्राणायाम का अच्छी प्रकार अभ्यास करे, तदुपरान्त आभ्यन्तर-प्राणायाम का और फिर क्रमशः स्तम्भवृत्ति और बाह्याभ्यान्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम का। इन प्राणायामों की विधि का उल्लेख यद्यपि स्वामी सत्यपति परिव्राजक ने अपनी पुस्तक 'सरल योग से ईश्वर साक्षात्कार' (पृ.75-77) में किया है, तथापि प्राणायाम में अच्छी गति रखने वाले अनुभवी गुरु से बिना सीखे प्राणायाम नहीं करना चाहिए। प्राणायाम शौचादि से निवृत्त होकर, बिना कुछ खाये पिये यथासंभव शुद्ध स्थान, शुद्ध वातावरण और एकान्त में करना चाहिए। प्राणायाम करते समय 'ओ३म्' या 'प्राणायाम मन्त्रों' का जाप करते रहना चाहिए। इससे प्राणों की शुद्धि होगी, उनमें पवित्रता का संचार होगा। प्राणायाम करने से जहाँ प्राण बलशाली और ऊर्जस्वी बनेंगे, वहाँ फेंफड़ों को प्रचुर मात्रा में शुद्ध वायु (आक्सीजन) के मिलने से रोगों की निवृत्ति भी होगी। रोगों की निवृत्ति से मनुष्य का शरीर स्वस्थ रहेगा और वह बलशाली बनेगा। प्राणायाम से अज्ञानान्धकार का आवरण नष्ट हो जाता है- 'ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्' (योगदर्शन, 2/52), अशुभ संस्कार समाप्त हो जाते हैं तथा विद्या की वृद्धि होती है। प्राणायाम से चित्त की एकाग्रता बढ़ती है तथा विद्या की वृद्धि होती है। प्राणायाम से चित्त की एकाग्रता बढ़ती है तथा चित्त की चंचलता समाप्त होती है। शीतकाल में शीत के प्रभाव को भी प्राणायाम एक सीमा तक कम करता है। स्वामी सत्यपति जी के अनुसार, 'प्राणायाम के आधार पर बिना हाथ-पैर की क्रिया किये लम्बे काल तक व्यक्ति जल पर लेटा रह सकता है।.....प्राणायाम करने से व्यक्ति के शरीर में इतना बल आ जाता है कि वह एक साथ दो कारों को रोक सकता है और अपनी छाती पर बहुत अधिक भार वाले पत्थर आदि को तुड़वाने में समर्थ हो जाता है।' (सरल योग से ईश्वर साक्षात्कार पंचम संस्करण, पृ. 79) इस प्रकार प्राणायाम से शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक दृष्टि से अनेक लाभ हैं। इससे अनेक दुःसाध्य रोगों का निदान भी सम्भव है, इसे जहाँ आजकल स्वामी रामदेव प्रयोगात्मक धरातल पर सिद्ध कर रहे हैं, वहाँ स्वामी सत्यपति एवं स्वामी (मां) अद्वैतानन्द सरस्वती के ग्रंथों में भी देखा जा सकता है। स्वामी (मां) अद्वैतानन्द सरस्वती का 'योग-थेरॅपि' इस दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण उपयोगी ग्रंथ है।

निःसन्देह, प्राणायाम करने के अनेक लाभ हैं। इससे प्राणों को बल और ऊर्जा प्राप्त होती है तथा प्राणायाम के साथ 'ओ३म्' नाम के जाप से प्राण पवित्र भी होते हैं, किन्तु शक्ति से अधिक प्राणायाम हानिकारक है-'अति सर्वत्र वर्जयेत्'। रुग्णावस्था में भी प्राणायाम नहीं करना चाहिए।

यह तो हुई प्राणों को बलशाली, ऊर्जस्वी और पवित्र बनाने

शुद्धि समाचार में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

की बात। आइए, अब इस पर भी विचार कर लें कि प्राणों को यशस्वी कैसे बनाया जा सकता है। प्राण वीरता, परोपकार, देश–धर्म–जाति (मानव–जाति) पर मर मिटने और ईश–भक्ति से यशस्विता को प्राप्त होते हैं, अमर–बन जाते हैं। जिसका यश होता है, वही जीवित रहता है, वही अमरत्व को प्राप्त होता है– 'कीर्तिर्यस्य स जीवति'। मातृत्व की सार्थकता ऐसी सन्तान को पैदा करने में है कि जो या तो भक्त हो या दानी और या फिर शूरवीर, अन्यथा स्त्री का बाँझ रहना अच्छा है, उसे अपना 'नूर' (सौन्दर्य, लावण्य, यौवन आदि) गँवाने से क्या लाभ? कवि के शब्दों में–

जननी जनै तो भक्त
जन कै दाता कै सूर।
न तो रहे वह बाँझ ही,
काहे गवावै नूर।।

निःसन्देह प्राणों की सबसे बड़ी सार्थकता ईश–भक्त होने में ही है। संसार में आज तक जितने भी सच्चे ईश–भक्त हुए हैं, वे अपने यशःशरीर से जीवित हैं, अजर–अमर हैं– भक्त ध्रुव, प्रहलाद आदि से लेकर महर्षि दयानन्द सरस्वती, महात्मा प्रभु आश्रित आदि। दानी व्यक्ति के प्राण भी यशस्विता को प्राप्त होते हैं– शिवि, दधीचि, कर्ण, राजा हरिश्चन्द्र आदि इसके उदाहरण हैं। शूरवीर भी कभी नहीं मरते। न्यायप्रिय, शूरवीर सम्राटों के असंख्य उदाहरण इतिहास ग्रंथों में मिल जाएँगे। मर्यादा पुरुषोत्तम राम, योगीराज श्री कृष्ण, गांडीवधारी अर्जुन आदि के नाम इस दृष्टि से देखे जा सकते हैं। देश की बलिवेदी पर मर मिटने वाले अमर शहीदों–शहीद भगत सिंह, सुखदेव, राजगुरु, चन्द्रशेखर आदि का नाम भला कौन नहीं जानता। क्या हम अमर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द, वीर हकीकत राय आदि के नामों को भुला सकते हैं? नहीं न। दरअसल देश पर मर मिटने वालों, दयालुओं, दानियों, परोपकारियों, धर्मवीरों आदि के नाम अमर हो जाते हैं, उनके प्राण यशस्वी हो जाते हैं। शास्त्रकारों ने वीर रस के चार भेद माने हैं– युद्धवीर, दानवीर, दयावीर, धर्मवीर, किन्तु 'महाभारत' में शूरों के बहुत से भेदों का उल्लेख हुआ। (दे. महाभारत, दानधर्म पर्व) पण्डितराज जगन्नाथ ने भी उक्त चार भेदों का उल्लेख करने के बाद सत्यवीर, पाण्डित्यवीर, क्षमावीर और बलवीर भेदों का भी नाम लिया है। इन सभी वीरों में यशस्विता प्राप्त करने वालों के नाम खोजे और लिए जा सकते हैं। यहाँ मूल तथ्य यही है कि हम संसार में रहते हुए कुछ–न–कुछ ऐसा श्रेष्ठ काम अवश्य करें कि जिससे हमारे प्राण यशस्वी हो जाएँ। बल का दुरुपयोग करने वालों के प्राण यशस्वी नहीं होते। वे विख्यात नहीं, कुख्यात होते हैं। वैदिक संध्या में 'ओं प्राणः प्राणः' के द्वारा प्राणों को बलशाली, पवित्र और यशस्वी बनाने की प्रार्थना की गयी है। साधक को सतत जागरुक रह कर इस दिशा में प्रयत्न करते हुए अपने जीवन को सार्थक बनाना है।

इस देश की भाषा हिन्दी है

इस देश की भाषा हिन्दी है.
किन्तु अन्य भाषाओं पर भी, नहीं यहाँ पाबन्दी है। इस देश की....
हिन्दी यदि रानी है तो सब, इसकी सखी सहेली हैं।
भारत के आंगन में सब की सब, हिलमिल कर खेली हैं।
भाषा को लेकर लड़ने की, बात बहुत ही गन्दी है। इस देश की...
जैसे हम सब आपस में, भाई–भाई हैं गैर नहीं।
वैसे हिन्दी को भारत की, भाषाओं से बैर नहीं।
हिन्दी तो बस एक मात्र, अंग्रेजी की प्रतिद्वंदी है। इस देश की...
क्षुद्र स्वार्थ के वश है अब तक, अंग्रेजी से प्यार तुम्हें।
हे मम्मी डेडी कहलाने वालों, है धिक्कार शतबार तुम्हें।
सिर्फ तुम्हारे कारण हिन्दी, अंग्रेजी की बन्दी है। इस देश की...
अब अंग्रेजी के प्रभुत्व से, निजमन का उद्धार करो।
दैनिक कामों में अधिकाधिक, हिन्दी का व्यवहार करो।
अंग्रेजी अनुराग सुनिश्चित, परम्परा जयचन्दी है। इस देश की...
भावों की अभिव्यक्ति हेतु, हिन्दी वैज्ञानिक भाषा है।
जैसा लिखो पढ़ो वैसा ही, यह इसकी परिभाषा है।
इसीलिये हिन्दी भारत माँ की, माथे की बिन्दी है। इस देश की...
सुन्दर सरल सुबोध मधुर, मोहक हिन्दी जन कल्याणी।
ऋषिवर दयानंद से पूजित, राष्ट्र देवता की वाणी।
तुलसी की गंगा है तो, रसखान की यह कालिन्दी है।
इस देश की भाषा हिन्दी है।।

–रचनाकार : श्री वल्लभजी आर्य

आर्यसमाज परिचय

स्वामी दयानन्द मुसलमानों के विरोधी नहीं थे। स्वामी जी का जब स्वर्गवास हुआ, तब सुप्रसिद्ध मुस्लिम नेता सर सैय्यद अहमद खां ने जो संवदेना और शोक प्रकट किया, उससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि मुस्लिम जनता के बीच भी स्वामी जी का यथेष्ट आदर था। स्वामी जी के बाद आर्य समाज और मुस्लिम सम्प्रदाय के बीच का सम्बन्ध अच्छा नहीं रहा, यह सत्य है, किन्तु स्वामी के जीवन काल मे ऐसी बात नहीं थी।

सच पूछिये तो स्वामी जी केवल इस्लाम के ही आलोचक नहीं थे, वे ईसाइयत और हिन्दुत्व के भी अत्यन्त कड़े आलोचक हुए हैं। सत्यार्थप्रकाश के त्रयोदश समुल्लास में ईसाई मत की आलोचना है और चतुर्दश समुल्लास में इस्लाम की। किन्तु, ग्यारहवें और बारहवें समुल्लासों में तो केवल हिन्दुत्व के ही विभिन्न अंगों की बखिया उधेड़ी गयी है।

स्वामी जी ने बुद्धिवाद की कसौटी बनायी और उसे हिन्दुत्व, इस्लाम और ईसाइयत पर निश्छल भाव से लागू कर दिया। परिणाम यह हुआ कि पौराणिक हिन्दुत्व तो इस कसौटी पर खण्ड–खण्ड हो ही गया, इस्लाम और ईसाइयत की भी सैकड़ों कमजोरियां लोगों के सामने आ गयी।

किसी का भी पक्षपात नहीं

ईसाइयत और इस्लाम हिन्दुत्व पर आक्रमण कर रहे थे, इसलिए हिन्दुत्व की ओर से बोलने वाला प्रत्येक व्यक्ति ईसाइयत या इस्लाम अथवा दोनों का द्रोही समझ लिया गया। किन्तु, इस प्रसंग से अलग हटने पर स्वामी दयानन्द विश्व मानवता के नेता दिखते हैं। उनका उद्देश्य सभी मनुष्यों को उस दिशा में ले जाना था, जिसे वे सत्य की दिशा समझते थे। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में स्वयं लिखा था कि "जो जो सब मतों में सत्य बातें हैं, वे वे .....में अविरूद्ध होने से उनका स्वीकार करके जो जो मत–मतान्तरों की गुप्त वा प्रकट बुरी बातों का प्रकाश कर विद्वान–अविद्वान् सब साधारण मनुष्यों के सामने रखा है, जिससे की एक विचार होकर परस्पर प्रेमी हो के एक सत्य मतस्थ होवें। यद्यपि मैं आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुआ और बसता हूँ, तथापि जैसे इस देश के मत–मतान्तरों की झूठी बातों का पक्षपात न करके यथातथ्य प्रकाश

– शेष पिछले अंक का

करता हूँ, वैसे ही, दूसरे देशस्थ या मनोन्नति वालों के साथ भी बर्त्तता हूँ। जैसा स्वदेश वालों के साथ मनुष्योन्नति के विषय में बर्त्तता हूँ वैसा विदेशियों के साथ भी तथा सब सज्जनों के भी बर्त्तना योग्य है। क्योंकि मैं भी जो किसी एक का पक्षपाती होता, तो जैसे आजकल के स्वमत की स्तुति, मण्डन और प्रचार करते और दूसरे मत की निन्दा, हानि और बन्द करने में तत्पर होते हैं, वैसे मैं भी होता, परन्तु ऐसी बातें मनुष्यपन से बाहर हैं।" अन्यत्र चौहदवें समुल्लास के अन्त में भी स्वामी जी ने कहा कि "मेरा कोई नवीन कल्पना व मत–मतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है। किन्तु जो सत्य है, उसे मानना–मनवाना और जो असत्य है, उसे छोड़ना–छुड़वाना मुझको अभीष्ट है। यदि मैं पक्षपात करता तो आर्यावर्त्त के प्रचलित मतों में से किसी एक मत का आग्रही होता। किन्तु मैं आर्यावर्त्त व अन्य देशों में जो अधर्म–युक्त चाल–चलन हैं, उनको स्वीकार नहीं करता और जो धर्मयुक्त बातें हैं, उनका त्याग नहीं करता, न करना चाहता हूं क्योंकि ऐसा करना मनुष्य धर्म के विरूद्ध हैं।"

सुधार नहीं क्रांति

उन्नीसवीं सदी के हिन्दू नवोत्थान के इतिहास का पृष्ठ–पृष्ठ बतलाता है कि जब यूरोप वाले भारतवर्ष में आये, तब यहां के धर्म और संस्कृति पर रूढ़ि की पर्तें जमी हुई थीं एवं यूरोप के मुकाबले में उठने के लिए यह आवश्यक हो गया कि ये पर्तें एकदम उखाड़ फेंकी जाएं और हिन्दुत्व का वह रूप प्रकट किया जाये जो निर्मल और बुद्धिगम्य हो। स्वामी जी के मत से यह हिन्दुत्व वैदिक हिन्दुत्व ही हो सकता था। किन्तु, यह हिन्दुत्व पौराणिक कल्पनाओं के नीचे दबा हुआ था। उस पर अनेक स्मृतियों की धूल जम गयी थी एवं वेद के बाद के सहस्त्रों वर्षों में हिन्दुओं ने जो रूढ़ियां और अन्धविश्वास अर्जित किये थे उनके ढूहों के नीचे यह धर्म दबा पड़ा था। राममोहन राय, रानडे, केशवचन्द्र और तिलक से भिन्न स्वामी दयानन्द की विशेषता यह रही कि उन्होंने धीरे–धीरे पपड़ियां तोड़ने का काम न करके, उन्हें एक चोट से साफ कर देने का निश्चय किया। परिवर्तन जब धीरे–धीरे आता है, तब सुधार कहलाता है। किन्तु, वही जब तीव्र वेग से पहुंच जाता है, तब तो उसे

सम्पादकीय

सोचते हैं करते नहीं

(हिन्दी दिवस पर विशेष)

– कैलाश चन्द्र शास्त्री
(कार्यकारी सम्पादक)

देश को स्वतन्त्र हुए 67 वर्ष हो गये, फिर भी हम जहाँ खड़े थे वहीं खड़े हैं। एक युग बीत गया लेकिन मानसिक दासता बनी हुई है। राष्ट्र भाषा, संस्कृति, सभ्यता, रहन–सहन का पाश्चात्य अन्धानुकरण देश को खड्डे में डाल देगा। भूमिका की आवश्यकता नहीं है। सभी जानते हैं 14 सितम्बर हिन्दी दिवस है। तोते की तरह रटकर बड़े ही गौरव से कहते हैं हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है, हिन्दी माथे की बिन्दी है इत्यादि...। किसी आदर्श वाक्य को बोलना अलग है और उसे व्यवहार में लाना और बात है। आदर्शों की रक्षा व्यवहार से होती है न कि भाषणों से, घोषणाओं से, लेखों से एवं कानून बना देने से।

यदि भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी है तो इसी भाषा में देश के न्याय, कानून, राजकाज आदि होना चाहिए। हमारी शिक्षा मातृभाषा में होनी चाहिए। न्यायालय की भाषा अंग्रेजी न होकर हिन्दी होनी चाहिए। मुट्ठी भर आदमी जिस भाषा को बोलते और समझते हैं उस अंग्रेजी के द्वारा सारी प्रजा का कार्य नहीं किया जा सकता। प्रजा की सम्मति उसी भाषा में प्रकट होनी चाहिए, जिसे वह समझती है। बड़े गर्व से कहते हैं गणतन्त्र है प्रजातन्त्र है। प्रजातन्त्र है तो प्रजा का शासन उसी भाषा में होना चाहिए, जिसको वह बोलती हो। सैम पित्रोदा ने तो पहली कक्षा से अंग्रेजी भाषा को अनिवार्य रूप से पढ़ाने के लिए सिफारिश कर दी और सरकार ने मान ली। संघलोक सेवा आयोग जैसी संस्था की सर्वोच्च प्रशासनिक सेवा परीक्षा में अंग्रेजी को अनिवार्य करने का षडयन्त्र किया जा रहा है। विश्व के सभी विकसित देशों चीन, जापान, फ्रान्स, जर्मनी, रूस आदि देशों में सम्पूर्ण शिक्षा अपनी मातृभाषा में ही दी जाती है। पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम ने कहा है– 'मैं आज वैज्ञानिक बन सका हूँ, क्योंकि मैं अपनी मातृभाषा में पढ़ा हूँ। ध्यान रखना–

मा, मातृभूमि और मातृभाषा का कोई विकल्प नहीं होता।

यूनेस्को की 1953 की रिपोर्ट के अनुसार विदेशी भाषा के माध्यम से पढ़ने वाला तथा वार्ता करने वाला व्यक्ति अपना व्यक्तित्व खोकर दूसरों का नकलची बन जाता है। टैगोर, तिलक, महामना मालवीय, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, बिनोवाभावे डॉ. कलाम, प्रसिद्ध वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र बसु, सुपर कम्प्यूटर के जनक डॉ. विजय भटकर, मेघनाद साहा, सरदार पटेल जैसे स्वनाम धन्य महापुरुषों की शिक्षा मातृभाषा में हुई थी। संसद में बैठे हुए अंग्रेजों के मानस पुत्र जिनको देश का कर्णधार कहा जाता है वस्तुतः वे सब देश का बंटाधार करने में लगे हैं। न केवल वे नेता दोषी हैं अपितु वे सभी लोग देश द्रोही हैं जिन्होंने अपने आत्मीय सम्बन्धों एवं दैनिक व्यवहार को अंग्रेजी में परिवर्तित कर दिया है।

आज जरुरत है कि कम से कम आप मम्मी, डैडी, अंकल, आंटी, प्रिंसिपल, मास्टर, टीचर, हेलो, हैप्पी बर्थ डे टू यू, गुड मोर्निंग, ब्रेक फास्ट, लंच, डिनर जैसे शब्दों को तो अपने घरों से निकाल फेंक सकते हैं। अंग्रेजी बोलने से गौरव नहीं बढ़ता अपितु बौद्धिक दरिद्रता झलकती है। अंग्रेजी बिना सिर पैर की दरिद्र भाषा है। जिसका कोई अपना एक स्थायी जीवन दर्शन एवं मूल्य नहीं है उसी भाषा से शिक्षा देना नैतिक पतन को निमन्त्रण देना है। क्यों कि बिना मूल्यों की शिक्षा सुगन्ध हीन फूल जैसी है।

कम से कम आप यह तो कर सकते हैं –

1. हस्ताक्षर अपनी भाषा (हिन्दी आदि) में करें न कि अंग्रेजी में। हस्ताक्षर व्यक्तित्व एवं मानसिकता की पहचान है।
2. कार्यालय, दुकान में नाम पट्टिका, नाम पट्ट (बोर्ड) रसीद, रबड़ की मोहर आदि अपनी भाषा में ही बनवायें।
3. विवाह संस्कार आदि के निमन्त्रण पत्र संस्कृत, हिन्दी एवं अपनी मातृभाषा में छापें एंव छपवायें।
4. बच्चों को आवेदन पत्र मातृभाषा में या हिन्दी में लिखवायें एवं स्वयं भी लिखें।
5. बैंक, विद्यालय, कार्यालय आदि के काम हिन्दी में करें एवं करवायें।
6. लोगों को जागरुक करें एवं क्रान्ति लायें। समाचार पत्र, इन्टरनेट, फेसबुक के माध्यम से हिन्दी को बढ़ावा दें।
7. अपना मतदान उस को करें जो अपनी भाषा या हिन्दी का समर्थक हो, न कि अंग्रेजी का।

आज जरुरत है सोया पड़ा स्वाभिमान को जगाने की। सुधार तो पहले अपना करना चाहिए बाद में दूसरों का। सोचते तो सभी हैं लेकिन करते नहीं। आशा है भारत देश के नागरिक अपने गौरव को जीवित एवं जागृत रखेंगे।

क्रांति के वेग ही मान्य हैं, अन्य शास्त्रों और पुराणों की बातें बुद्धि की कसौटी पर कसे बिना मानी नहीं जानी चाहिए। छह शास्त्रों और अठारह पुराणों को उन्होंने एक ही झटके में साफ कर दिया। वेदों में मूर्तिपूजा, अवतारवाद, तीर्थों और अनेक पौराणिक अनुष्ठानों का समर्थन नहीं था, अतएव स्वामी जी ने इन सारे कृत्यों और विश्वास को गलत घोषित किया।

वेद को छोड़कर कोई अन्य ग्रन्थ प्रमाण नहीं है, इस सत्य का प्रचार करने के लिए स्वामी जी ने सारे देश का दौरा करना आरम्भ किया और जहां–जहां वे गये, प्राचीन परम्परा के पंडित और विद्वान उनसे हार मानते गये। संस्कृत भाषा का उन्हें आगाध ज्ञान था। संस्कृत में वे धाराप्रवाह रूप में बोलते थें। साथ ही, वे प्रचण्ड तार्किक थे। उन्होंने ईसाई और मुस्लिम धर्म ग्रन्थों का भी भली भांति मन्थन किया था। अतएव, अकेले ही, उन्होंने तीन–तीन मोर्चों पर संघर्ष आरम्भ कर दिया। दो मोर्चे तो ईसाइयत और इस्लाम के थे, किन्तु तीसरा मोर्चा सनातन धर्मी हिन्दुओं का था, जिनसे जूझने में स्वामी जी ने अनेक अपमान, कुत्सा, कलंक और कष्ट झेलने पड़े। उनके प्रचण्ड शत्रु ईसाई और मुसलमान नहीं, सनातनी हिन्दू ही निकले और, कहते हैं, अन्त में, इन्हीं हिन्दुओं के षड्यंत्र से उनका प्राणान्त भी हुआ। दयानन्द ने बुद्धिवाद की जो मशाल जलायी थी, उसका कोई जवाब नहीं था। वे जो कह रहे थे, उसका उत्तर न तो मुसलमान दे सकते थे, न ईसाई, न पुराणों पर पलने वाले हिन्दू पंडित और विद्वान। हिन्दू–नवोत्थान अब पूरे प्रकाश में आ गया था और अनेक समझदार लोग, मन–ही–मन, यह अनुभव करने लगे थे कि, सच ही पौराणिक धर्म में कोई सार नहीं है।

थियोसोफी और स्वामी दयानन्द

जब थियोसोफिस्ट लोग भारत आये, तब थोड़े दिन उन लोगों ने भी आर्यसमाज से मिलकर काम किया। किन्तु थियोसोफिस्टों की भी बहुत सी बातें स्वामी जी के सिद्धान्तों के विपरीत थी। अतएव, वे लोग भी आर्यसमाज से अलग हो गये। किन्तु, अलग होने पर भी स्वामी जी पर थियोसोफिस्टों की भक्ति ज्यों की त्यों बनी रही। स्वामी जी के देहावसान के बाद मादाम ब्लेवत्स्की ने लिखा था कि जन–समूह के उबलते हुए क्रोध के सामने कोई संगमरमर की मूर्ति भी स्वामी जी से अधिक अडिग नहीं हो सकती थी। एक बार हमने उन्हें काम करते देखा था। उन्होंने अपने सभी विश्वासी अनुयायियों को यह कह कर अलग हटा दिया कि तुम्हें हमारी रक्षा करने की कोई आवश्यकता नहीं है। भीड़ के सामने वे अकेले ही खड़े हो गये। लोग उतावले हो रहे थे, क्रुद्ध सिंह के समान वे स्वामी जी पर टूट पड़ने को तैयार थे। किन्तु, स्वामी जी की धीरता, ज्यों की त्यों बनी रही। बिल्कुल सही बात है कि शंकराचार्य के बाद से भारत में कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं हुआ जो स्वामी जी से बड़ा संस्कृतज्ञ, उनसे बड़ा दार्शनिक उनसे अधिक तेजस्वी वक्ता तथा कुरीतियों पर टूट पड़ने में उनसे अधिक निर्भीक रहा हो" स्वामी जी की मृत्यु के बाद थियोसोफिस्ट अखबार ने उनकी प्रशंसा करते हुए लिखा था कि "उन्होंने जर्जर हिन्दुत्व के गतिहीन ढूह पर भारी बम का प्रहार किया और अपने भाषणों से लोगों के हृदयों में ऋषियों और वेदों के लिए अपरिमित उत्साह की आग जला दी। सारे भारतवर्ष में उनके समान हिन्दी और संस्कृत का वक्ता दूसरा कोई और नहीं था।"

आर्यसमाज की विशेषता

स्वामी जी ने ईश्वर, जीव और प्रकृति, तीनों को अनादि माना है, किन्तु यह तो इस्लाम से अधिक भारतीय योग दर्शन का मत है। भिन्नता यह है कि स्वामी जी यह नहीं मानते कि भगवान पापियों के पाप को क्षमा करते हैं। जिन बुराइयों के कारण हिन्दू धर्म का ह्रास हो रहा था तथा अन्य धर्मों के लोग जिन दुर्बलताओं का लाभ उठा कर हिन्दुओं को ईसाई बना रहे थे, उन बुराइयों को स्वामी जी ने अवश्य दूर किया, जिससे हिन्दुओं के सामाजिक संगठन में वही दृढ़ता आ गयी जो इस्लाम में थी। स्वामी ने छुआछूत के विचार को अवैदिक बता कर और उनके समाज के सहस्त्रों अन्त्यजों को यज्ञोपवीत देकर उन्हें हिन्दुत्व के भीतर आदर का स्थान दिया। आर्य समाज ने नारियों की मर्यादा में वृद्धि की एवं उनकी शिक्षा संस्कृति का प्रचार करते हुए विधवा–विवाह का भी प्रचलन किया। कन्या शिक्षा और ब्रह्मचर्य का आर्य समाज में इतना अधिक प्रचार किया कि हिन्दी प्रान्तों में साहित्य के भीतर एक प्रकार की पवित्रतावादी भावना भर गयी और हिन्दी के कवि कामिनी

नारी की कल्पना मात्र से घबराने लगे। पुरूष शिक्षित और स्वस्थ हों, नारियां शिक्षिता और सबल हों, लोग संस्कृत पढ़ें और हवन करें, कोई भी हिन्दू मूर्ति पूजा का नाम न ले, न पुरोहितों, देवताओं और पण्डों के फेर में पड़े, ये उपदेश उन सभी प्रान्तों में कोई पचास साल तक गूंजते रहे, जहां आर्य समाज का थोड़ा बहुत भी प्रचार था।

वर्णाश्रम का आधार उन्होंने गुण–कर्म को माना। उन्होंने देव का अर्थ विद्वान्, 'असुर' का अविद्वान्, 'राक्षस' का 'पापी' और 'पिशाच' का अनाचारी माना। पुरूषार्थ को उन्होंने प्रारब्ध से बड़ा बताया तथा सुख–भोग को स्वर्ग तथा दुःख भोग को नरक कहा। यह हिन्दू धर्म की बुद्धिवादी टीका थी। यह विज्ञान की कसौटी पर चढ़े हुए हिन्दुत्व का निखार था।....

स्वामी दयानन्द ने तो संस्कृत की सभी सामग्रियों को छोड़कर केवल वेदों को पकड़ा और उनके सभी अनुयायी भी वेदों की दुहाई देने लगे। परिणाम इसका यह हुआ कि वेद और आर्य, भारत में ये दोनों सर्वप्रमुख हो उठे और इतिहास वालों अर्थात् आर्यों की रचना है। हिन्दू सारे भारत में बसते हैं उनकी नसों में आर्य के साथ द्रविड़ रक्त भी प्रवाहित है। हिन्दुत्व के उपकरण केवल संस्कृति में निहित उपकरणों को एकत्र किये बिना हिन्दुत्व का पूरा चित्र नहीं बनाया जा सकता।

आर्य समाज के नियम व उद्देश्य

1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदिमूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है उसी की उपासना करनी चाहिए।
3. वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य बर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

–साभार दिव्य वैदिक ज्ञान ज्योति

हिन्दी भारत का स्वाभिमान

मनोवैज्ञानिक कारण है कि व्यक्ति अपने जीवन में जो अभिलाषा पूरी नहीं कर पाता उसे वह अपने सन्तान से करवा कर तृप्त होता है। जैसे वह डॉक्टर बनना चाहता था मगर नहीं बन पाया सो बेटे को डॉक्टर बनाने में मर खप रहा है। उसकी जिन्स पहनने की बहुत तमन्ना थी मगर बेचारी पहन न पाई, अब अपनी बिटिया को जिन्स पहनाकर तृप्त हो रही है। उसने अपने पुत्र–पुत्री अंग्रेजी माध्यम की स्कूल में इस लिये पढ़ने भेजे क्योंकि उसे अंग्रेजी नहीं आती। जब वह लागों को अंग्रेजी पढ़ते–बोलते देखता है जो खुद आत्मग्लानी में अपने आप की नजर में गिर जाता है। उसकी भी अपनी प्रतिभा है। उसकी भी अपनी योग्यता और विशेषताएं हैं जो बहुमुल्य ही नहीं अमूल्य है। मगर वह उन सबको भुलाकर अंग्रेजी के आगे अपने को दीन–हीन समझता है।

इस बात पर फिर से चिंतन करें तो हम पाते हैं कि अंग्रेजी के आगे वह अपना आत्मस्वाभिमान खो बैठा है। और दूसरी बात उसे अपने बच्चों से प्यार भी है। वह अपने बच्चों को दुनिया की दौड में पीछे नहीं देखना चाहता।

ठीक यही बात मैं अपने देश के पहले प्रधानमंत्री नेहरूजी के साथ भी पाता हूँ। वे अंग्रेजी भाषा के, अंग्रेजियत के दिवाने थे। वे भारत को इंग्लैंड की तरह उन्नत देखना चाहते थे। वे भारत को इंडिया बनाना चाहते थे। सच में ये उनका देश प्रेम था। मगर भारत के लिये बड़ा खतरनाक था। क्योंकि भारत के पास अपनी संस्कृति थी। भारत के पास अपनी भाषा थी। भारत मात्र भूमि नहीं राष्ट्र था। नेहरूजी ने देश की दिशा ही बदल दी और देश उन्नति की किसी और ही राह चल पड़ा। उ. कि कोई श्रेष्ठ विकल्प नहीं था। अच्छा होता हम राष्ट्रवाद की भावना के साथ, संस्कृति विकास और आध्यात्म को साथ लेके प्रगति और समृद्धि को पाते।

इंडिया को उजागर करने के लिये भारत के गौरवशाली इतिहास को भुला दिया गया। मात्र पंद्रह वर्ष अंग्रेजी को राज भाषा के रूप में और राज करने दो फिर हिन्दी अपना लेंगे। मगर छल हुआ। आज 15 नहीं 64 वर्ष हो गये अंग्रेजी का ही शासन है। और अब तो आँखें दिखाई जातीं और कहा जाता है अनिश्चित काल तक अंग्रेजी ही रहेगी। इस अनिश्चित काल की समय सीमा को पूरा करने की और हिन्दी ही को राष्ट्र भाषा, राज भाषा के रूप में प्रतिष्ठापित करने की जिम्मेदारी मेरी, आपकी और प्रत्येक राष्ट्रभक्त नागरिक की है।

अंग्रेजी को राजभाषा रहने का कोई हक नहीं है क्योंकि यह भारत के किसी एक गांव में भी बोली जाने वाली भाषा नहीं है। किसी भी भारतीय की मातृभाषा अंग्रेजी नहीं है। अंग्रेजी को अपनाना मात्र हमारे दिमाग में गुलामी की, दासता की जड़ें बड़ी गहरी बैठी है बस यही दर्शाता है।

अंग्रेजी की दुहाई देते हुए कहा जाता है कि यह विश्व की संपर्क भाषा है। यह बात भी पूरी तरह झूठ है। जो 40 देश अंग्रेजों के गुलाम रहे थे और अमरिका और इंग्लैंड ही अंग्रेजी को जानते हैं। जबकी विश्व के 160 देश अंग्रेजी नहीं जानते। विश्व में सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा चीनी है और दूसरा क्रमांक हिन्दी का है। रूसी, स्पेनिज, पोर्तुगीच और डच इत्यादी ग्यारह भाषाओं के बाद सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषाओं में अंग्रेजी बारहवे पायदान पर है। फिर यह कैसी विश्व भाषा। यह भी सत्य है कि 10 करोड़ लोग ही अर्थात विश्व की 4 प्रतिशत आबादी ही अंग्रेजी को जानते, बोलते समझते और लिखते हैं। हमारा चीन से व्यापार बढ़ा है वहाँ अंग्रजी कुछ काम नहीं आ रही। भारत और चीन की बात दुभाषियों से होती है। हम रूस, जापान, जर्मन आदि से भी अंग्रेजी में बात नहीं कर सकते। अतः जिनके दिमाग में अंग्रेजी की श्रेष्ठता का कीडा लगा हुआ है उन्हे अपने दिमाग को ठीक करना चाहिये।

वैसे भी अंग्रेजी कोई श्रेष्ठ भाषा नहीं है। इसका व्याकरण बिना लगाम के घोडे जैसा है। जिसमें कोई वैज्ञानिकता नहीं है। पांचवी शताब्दी में इंग्लैंड के जंगली लोगों ने इसे बोलना शुरू किया और बनी अंग्रेजी भाषा। इससे पहले वहाँ लेटिन भाषा चलती थी। अंग्रेजी के शब्द भी इधर–उधर की भाषाओं से उधार लिये गये जो संख्या में एक लाख पचियासी हजार हैं। अंग्रेजी मूल के तो मात्र पैंसठ हजार शब्द ही हैं। जबकी हिन्दी में अपने मौलिक साठ लाख शब्द हैं।

यह भी तर्क दिया जाता है कि विज्ञान और तकनिकी में प्रगति करने के लिये अंग्रेजी सीखना आवश्यक है। यह भी झूठ है क्योंकि विज्ञान और तकनिकी की अधिकतम पुस्तकें रूसी भाषा में हैं। शोध पत्र भी रूसी भाषा में हैं क्यों न हम रूसी सीख लेते। वास्तव में हमें विज्ञान और तकनिकी के लिये अंग्रेजी नहीं चाहिये। पुस्तकें तो अनुवादित भी की जा सकती हैं। ज्ञान किसी एक भाषा का गुलाम नहीं होता। हमें तो अंग्रेजी के माध्यम से अंग्रेजों के तलवे चाटने की आदत जो पड़ गई है।

यह भी तर्क दिया जाता है कि दक्षिण भारत हिन्दी नहीं चाहता। यह बात भी पूरी तरह असत्य है। मैं एक ऐसे शहर में रहता हूँ जहाँ दक्षिण भारत के सभी प्रांतों के एवं सुदूर ईशान्य भारत के नागरिक भी बहुतायत में रहते है। मेरा प्रतिदिन 125 से 150 व्यक्तियों से वार्तालाप करने का काम पड़ता है और मैं पाता हूँ सभी लोग बहुत अच्छी हिन्दी बोलते हैं। विशेष रूप से दक्षिण भारत के भी। भाषा के बारे में विभिन्न प्रांतों के व्यक्तियों से बातें करके मैंने पाया किसी दक्षिण भारतीय के मन में हिन्दी के प्रति द्वेष नहीं है। वे सहजता से हिन्दी सीखते हैं और हिन्दी को ही पूरे भारत के लिये संपर्क भाषा स्वीकार करते हैं। फिर हिन्दी विरोध जो देखने को मिलता है बस सब राजनैतिक स्तर पर है। प्रांतीय सरकारें हिन्दी का स्थान अंग्रेजी को दिये बैठी है। यदि दक्षिण भारत का ग्रामीण हिन्दी नहीं जानता तो वह अंग्रेजी भी तो नहीं जानता और मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि राजस्थान के कई ग्रामीण भी हिन्दी नहीं जानते। ऐसे ग्रामीणों की आड में हिन्दी का स्थान अंग्रेजी का देना एक सोचा समझा षडयंत्र है। आज दक्षिण में अंग्रेजी का जो प्रचार दिखता है यदि हिन्दी को राजभाषा रखा जाता तो यह प्रचार हिन्दी का हुआ होता।

हिन्दी ही वह भाषा है जो भारत की प्रतिभा निखार सकती है अतः मात्र हिन्दी दिवस पर हिन्दी के लिये मातम मनाने से कुछ नहीं होगा। हिन्दी को राजभाषा बनाना चाहते हो तो संसद और विधान सभाओं में हिन्दी को चाहने वालों को पहुचाओ। जब तक काले अंग्रेज शासन करते रहेंगे अंग्रेजी ही राज भाषा रहेगी। हमें राजतंत्र, कानुन, शिक्षा, चिकित्सा और कृषि आदि सभी क्षेत्रों में हिन्दी और प्रांतीय भाषाएं ही चाहिये। बस यही मांग है भारत स्वाभिमान आंदोलन की। जय हिन्द जय भारत।

–गिरीश त्रिवेदी, पुणे (महाराष्ट्र)

शिक्षक एक सुन्दर, सुसभ्य एवं शांतिपूर्ण राष्ट्र व विश्व के निर्माता हैं!

–डॉ. जगदीश गांधी, शिक्षाविद् एवं संस्थापक–प्रबन्धक,
सिटी मोन्टेसरी स्कूल, लखनऊ

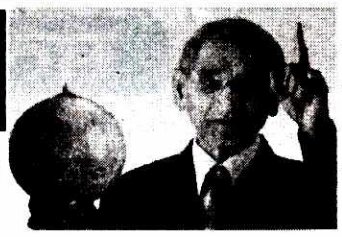

(1) सर्वपल्ली डा. राधाकृष्णन एवं शिक्षक दिवस :–

5 सितम्बर को आज एक बार फिर सारा देश भारत के पूर्व राष्ट्रपति सर्वपल्ली डा. राधाकृष्णन का जन्मदिवस 'शिक्षक दिवस' के रूप में मनाने जा रहा है। सारा देश मानता है कि वे एक विद्वान, दार्शनिक, महान शिक्षक, भारतीय संस्कृति के सर्वश्रेष्ठ व्याख्याकार तो थे ही साथ ही एक सफल राजनयिक के रूप में भी उनकी उपलब्धियों को कभी भुलाया नहीं जा सकता। सन् 1962 में जब वे राष्ट्रपति बने थे, तक कुछ शिष्य और प्रशंसक उनके पास गए थे। उन्होंने डॉ. राधाकृष्णन जी से निवेदन किया था कि वे उनके जन्मदिन को 'शिक्षक दिवस' के रूप में मनाना चाहते हैं। उस समय डा. राधाकृष्णन ने कहा था कि "मेरे जन्मदिन को शिक्षक दिवस के रूप में मनाने से निश्चय ही मैं अपने को गौरवान्वित अनुभव करुँगा।" और तब से प्रत्येक वर्ष 5 सितम्बर सारे देश में शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जा रहा है।

(2) महर्षि अरविन्द की नजर में शिक्षक :–

महर्षि अरविंद ने शिक्षकों के सम्बन्ध में कहा है कि "शिक्षक राष्ट्र की संस्कृति के चतुर माली होते हैं। वे संस्कारों की जड़ों में खाद देते हैं और अपने श्रम से सींचकर उन्हें शक्ति में निर्मित करते हैं।" महर्षि अरविंद का मानना था कि किसी राष्ट्र के वास्तविक निर्माता उस देश के शिक्षक होते हैं। इस प्रकार एक विकसित, समृद्धि और खुशहाल देश व विश्व के निर्माण में शिक्षकों की भूमिका ही सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण होती है। द्वितीय विश्व युद्ध के समय हिटलर के यातना शिविर से जान बचाकर लौटे हुए एक अमेरिकी स्कूल के प्रिसिंपल ने अपने शिक्षकों के नाम पत्र लिखकर बताया था कि उसने यातना शिविरों में जो कुछ अपनी आँखों से देखा, उससे शिक्षा को लेकर उसका मन संदेह से भर गया।

(3) द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान हिटलर के यातना शिविर से जान बचाकर लौटे एक प्रिसिंपल का अपने शिक्षकों के नाम पत्रः–

प्रिंसिपल ने पत्र में लिखा "प्यारे शिक्षको, मैं एक यातना शिविर से जैसे–तैसे जीवित बचकर आने वाला व्यक्ति हूँ। वहाँ मैंने जो कुछ देखा, वह किसी को नहीं देखना चाहिए। वहाँ के गैस चैंबर्स विद्वान इंजीनियरों ने बनाए थे। बच्चों को जहर देने वाले लोग सुशिक्षित चिकित्सक थे। महिलाओं और बच्चों को गोलियों से भूनने वाले कॉलेज में उच्च शिक्षा प्राप्त स्नातक थे। इसलिए, मैं शिक्षा को संदेह की नजरों से देखने लगा हूँ। आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप अपने छात्रों को 'मनुष्य' बनाने में सहायक बनें। आपके प्रयास ऐसे हों कि कोई भी विद्यार्थी दानव नहीं बने। पढ़ना–लिखना और गिनना तभी तक सार्थक है, जब तक वे हमारें बच्चों को 'अच्छा मनुष्य' बनाने में सहायता करते हैं।"

(4) उच्च मानवीय सद्गुणों से ओतप्रोत डाक्टर यानुश कोर्चाक का बच्चों के प्रति अगाढ़ प्रेमः–

इसी यातना शिविर में अनाथ बच्चों को पढ़ाने वाले एक उच्च मानवीय सद्गुणों से ओतप्रोत डॉक्टर यानुश कोर्चाक भी थे। यानुश कोर्चाक पोलैण्ड की वर्तमान राजधानी वारसा की यहूदी बस्ती के अनाथालय में बच्चों का पालन और शिक्षण करते थे। हिटलर के दरिन्दों ने इन अभागे बच्चों को त्रैब्लीन्का मृत्यु शिविर की भट्टियों में झोंकने का फैसला कर दिया था। जब यानुश कोर्चाक से वह पूछा गया कि वे क्या चुनेंगे, "बच्चों के बिना जिंदगी या बच्चों के साथ मौत?' तो कोर्चाक ने बिना हिचक और दुविधा के तुरंत कहा कि वे 'बच्चों के साथ मौत को ही चुनेंगे।" गेस्टापो के एक असफर ने उनसे कहा कि 'हम जानते हैं कि आप अच्छे डॉक्टर हैं, आपके लिए त्रैब्लीन्का जाना जरूरी नहीं हैं।' तब डा. यानुश कोर्चक का जवाब था "मैं अपने ईमान का सौदा नहीं करता।"

(5) जीवन के अंतिम क्षण तक सच्चे शिक्षक की भूमिका निभाई कोर्चाक ने :–

नैतिक सौंदर्य के धनी यानुश कोर्चाक ने वीरोचित भाव से मौत का आलिंगन इसलिए किया था कि वे जीवन के अंतिम क्षण तक सच्चे शिक्षक की तरह बच्चों के साथ रहकर उन्हें धीरज बँधाते रहें। कहीं बच्चे घबरा न जाएँ और उनके नन्हें एवं कोमल हृदयों में मौत के इंतजार का काला डर समा न जाए। यानुश कार्चाक का नैतिक बल और अंतःकरण की अनन्य निर्मलता आज के शिक्षक के लिए प्रेरणा ही नहीं, एक बेजोड़ मिसाल है।

(6) एक बालक का जीवन बदलने से सारे विश्व में परिवर्तन आ सकता है:–

'युद्ध के विचार सबसे पहले मनुष्य के मस्तिष्क में पैदा होते हैं अतः दुनियाँ से युद्धों को समाप्त करने के लिये मनुष्य के मस्तिष्क में ही शान्ति के विचार उत्पन्न करने होंगे।' शान्ति के ऐसे विचार देने के लिए मनुष्य की सबसे श्रेष्ठ अवस्था बचपन ही है। विश्व एकता, विश्व शान्ति एवं वसुधैव कुटुम्बकम् के विचारों को बचपन से ही प्रत्येक बालक–बालिका को ग्रहण कराने की आवश्यकता है ताकि आज के ये बच्चे कल बड़े होकर सभी की खुशहाली एवं उन्नति के लिए संलग्न रहते हुए "वसुधैव कुटुम्बकम्" अर्थात 'सारी वसुधा एक कुटुम्ब के समान है' के स्वप्न को साकार कर सके। एक बालक का जीवन बदलने से सारे विश्व में परिवर्तन आ सकते हैं।

(7) बालक के जीवन निर्माण में सबसे बड़ा योगदान विद्यालय का होता है:–

वैसे तो तीनों स्कूलों परिवार, समाज तथा विद्यालय के अच्छे–बुरे वातावरण का प्रभाव बालक के कोमल मन पर पड़ता है। लेकिन इन तीनों में से सबसे ज्यादा प्रभाव बालक के जीवन निर्माण में विद्यालय का पड़ता है। बालक बाल्यावस्था में सर्वाधिक सक्रिय समय स्कूल में देता है। दूसरे बालक विद्यालय में ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा लेकर ही आता है। यदि किसी स्कूल में भौतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक तीनों गुणों से ओतप्रोत एक भी टीचर आ जाता है तो वह स्कूल के वातावरण को बदल देता है और बालक के जीवन में प्रकाश भर देता है। वह टीचर बच्चों को इतना पवित्र, महान तथा चरित्रवान बना देता हैं कि ये बच्चे आगे चलकर सारे समाज, राष्ट्र व विश्व को एक नई दिशा देते हैं।

(8) विद्यालय समाज के प्रकाश का केन्द्र है:–

स्कूल चार दीवारों वाला एक ऐसा भवन है जिसमें कल का भविष्य छिपा है। मनुष्य तथा मानव जाति का भाग्य क्लास रूम में गढ़ा जाता है। अतः आने वाले समय में विश्व में एकता एवं शांति स्थापित होगी या अशांति एवं अनेकता की स्थापना होगी, यह आज स्कूलों में बच्चों को दी जाने वाली शिक्षा पर निर्भर करता है। विश्व के बच्चों को यदि स्कूलों द्वारा 'विश्व बन्धुत्व' तथा 'भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51' का ज्ञान दिया जाये तो निश्चित रूप से ये बच्चे कल (1) 'विश्व सरकार', (2) 'विश्व संसद', (3) 'विश्व न्यायालय' (4) 'विश्व पुलिस' तथा (5) 'विश्व मुद्रा' का गठन करके पूरे विश्व में एकता एवं शांति की स्थापना करेंगे।

(9) शिक्षक एक सुन्दर, सुसभ्य एवं शांतिपूर्ण राष्ट्र व विश्व के निर्माता हैं:–

शिक्षकों को संसार के सारे बच्चों को एक सुन्दर एवं सुरक्षित भविष्य देने के लिए व सारे विश्व में एकता एवं शांति की स्थापना के लिए बच्चों के कोमल मन–मस्तिष्क में भारतीय संस्कृति, संस्कार व सभ्यता के रूप में "वसुधैव कुटुम्बकम्" व 'भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51' के विचार रूपी बीज बचपन से ही बोने चाहिए। हमारा मानना है कि भारतीय संस्कृति, संस्कार व सभ्यता के रूप में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' व 'भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51' रूपी बीज बोने के बाद उसे स्वस्थ और स्वच्छ वातावरण व जलवायु प्रदान कर हम प्रत्येक बालक को एक विश्व नागरिक के रूप में तैयार कर सकते हैं। इसके लिए प्रत्येक बालक को बचपन से ही परिवार, स्कूल तथा समाज में ऐसा वातावरण मिलना चाहिए जिसमें वह अपने हृदय में इस बात को आत्मसात् कर सके कि ईश्वर एक है, धर्म एक है तथा मानवता एक है। ईश्वर ने ही सारी सृष्टि को बनाया है। ईश्वर सारे जगत से बिना किसी भेदभाव के प्रेम करता है। अतः हमारा धर्म (कर्तव्य) भी यही है कि हम बिना किसी भेदभाव के सारी मानव जाति से प्रेम कर सारे विश्व में आध्यात्मिक साम्राज्य की स्थापना करें।

(10) शिक्षक ही उस संसार में आध्यात्मिक साम्राज्य की स्थापना कर सकते हैं:–

ऐसे अनेक उदाहरण देखे गये हैं कि भौतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक गुणों से ओतप्रोत एक शिक्षक ही पूरे विद्यालय तथा समाज में बदलाव ला सकता है। श्री गोपाल

कृष्ण गोखले, पं. मदन मोहन मालवीय, गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर, डा. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् आदि ने अकेले ही सारे समाज को बदलने की मिसालें प्रस्तुत की हैं। एक अच्छा शिक्षक लाखों के बराबर होता है। वास्तव में शिक्षक भी ऐसे होने चाहिए जो कि स्वयं इस बात का विश्वास करते हों कि ईश्वर एक है, धर्म एक है तथा मानव जाति एक है साथ ही ऐसे शिक्षाक मनुष्य की तीन वास्तविकताओं भौतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक की संतुलित शिक्षा देने वाले भी हो। वे शिक्षक बालक को पहले उनके आन्तरिक गुणों को विकसित करके उन्हें नेक बनाये तथा फिर बाह्य गुणों को विकसित करके उन्हें चुस्त भी बनाये, बालक को धरती का प्रकाश तथा मानव जाति का गौरव बनाये। वास्तव में ऐसे ही शिक्षकों के श्रेष्ठ मार्गदर्शन द्वारा धरती पर स्वर्ग अर्थात् ईश्वरीय सभ्यता की स्थापना होगी।

(11) हमें प्रत्येक बालक को धरती का प्रकाश बनाना है:–

प्रत्येक बालक धरती का प्रकाश है किन्तु यदि उसे उद्देश्यपूर्ण अर्थात भौतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक तीनों प्रकार की संतुलित शिक्षा न मिली तो वह धरती का अन्धकार भी बन सकता है। इसलिए उद्देश्यपूर्ण शिक्षा को सबसे अधिक महत्व देना चाहिए तथा बालक के मस्तिष्क तथा हृदय को अज्ञानी अभिभावकों, टीचर्स तथा राजनैतिक, सामाजिक व धार्मिक गुरुओं की अज्ञानता से बचाना चाहिए। हमारा मानना है कि आज की शिक्षा का उद्देश्य मानव जाति को 1. ईश्वरीय अनास्था, 2. अज्ञानता, 3. संशयवृत्ति तथा 4. आन्तरिक संघर्ष से मुक्त करने के साथ ही प्रत्येक बच्चे को इस धरती का प्रकाश बनाना होना चाहिए। इसके लिए शिल्पकार एवं कुम्हार की भाँति ही स्कूलों एवं उसके शिक्षकों का यह प्रथम दायित्व एवं कर्त्तव्य है कि वह अपने यहाँ अध्ययनरत सभी बच्चों को इस प्रकार से संवारे और सजाये कि उनके द्वारा शिक्षित किये गये सभी बच्चे 'विश्व का प्रकाश' बनकर सारे विश्व को अपनी रोशनी से प्रकाशित करें।

(12) आइये, शिक्षक दिवस के अवसर पर हम डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन जी की शिक्षाओं को अपने जीवन में आत्मसात् करने का संकल्प लें:–

डॉ. राधाकृष्णन् अपनी बुद्धिमत्तापूर्ण व्याख्याओं, आनंदमयी अभिव्यक्ति और हँसाने, गुदगुदाने वाली कहानियों से अपने छात्रों को प्रेरित करने के साथ ही साथ उन्हें अच्छा मार्गदर्शन भी दिया करते थे। ये छात्रों को लगातार प्रेरित करते थे कि वे उच्च नैतिक मूल्यों को अपने आचारण में उतारें। वे जिस विषय को पढाते थे, पढ़ाने के पहले स्वयं उसका अच्छा अध्ययन करते थे। दर्शन जैसे गंभीर विषय को भी वे अपनी शैली की नवीनता से सरल और रोचक बना देते थे। उनकी मान्यता थी कि यदि सही तरीके से शिक्षा दी जाए तो समाज की अनेक बुराइयों को मिटाया जा सकता है। उनका मानना था कि करूणा, प्रेम और श्रेष्ठ परंपराओं का विकास भी शिक्षा के उद्देश्य हैं। वे कहते थे कि जब तक शिक्षक शिक्षा के प्रति समर्पित और प्रतिबद्ध नहीं होता और शिक्षा को एक मिशन नहीं मानता तब तक शिक्षक शिक्षा के प्रति समर्पित और प्रतिबद्ध नहीं होता और शिक्षा को एक मिशन नहीं मानता तब तक अच्छी व उद्देश्यपूर्ण शिक्षा की कल्पना नहीं की जा सकती। आइये, शिक्षक दिवस के अवसर पर हम डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् जी की शिक्षाओं, उनके आदर्शों एवं जीवन–मूल्यों को अपने जीवन में आत्मसात् करके उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि प्रकट करें। डा. राधाकृष्णन एक सच्चे देशभक्त, कुशल प्रशासक, उच्च कोटि के विद्वान एवं राजनयिक थे। उन्होंने देश के राष्ट्रपति पद को नई ऊँचाइयाँ प्रदान कीं। देश के संवैधानिक इतिहास में उनका योगदान कभी भुलाया नहीं जा सकता। ऐसे विलक्षण व्यक्तित्व को शत्–शत् नमन।

श्री चन्द्रभान चौधरी जी द्वारा एकत्रित दान राशि

कुमारी गरिमा जी, बी–2, पश्चिम विहार, नई दिल्ली	1000/– मासिक
श्रीमती चन्द्रकला राजपाल जी, पश्चिम विहार, नई दिल्ली	500/– मासिक
डा. पुष्पलता वर्मा जी, प्रधान–आर्य समाज विकासपुरी, नई दिल्ली	50/– मासिक
श्रीमती ऊषा कुकरेजा जी, विकासपुरी, नई दिल्ली	50/– मासिक
श्रीमती संतोष कोछड़ जी, विकासपुरी, नई दिल्ली	50/– मासिक
श्री सुखदेव महाजन जी, विकासपुरी, नई दिल्ली	50/– मासिक

नोट:– श्री मानवेन्द्र गुलाटी जी ने श्री चौधरी जी के आग्रह पर शुद्धि सभा के लिए एकत्रित राशि प्रदान कर रहे हैं।

सत्य स्वरूप

देव अनेक हैं। परन्तु ईश्वर एक है। उस ईश्वर के नाम और स्वरूप अलग हैं। हर किसी देव का पूजन करो, परंतु ध्यान तो एक ईश्वर का ही करो। जो कोई भी जिस किसी स्वरूप के प्रति आस्था रखता हो उसका ही ध्यान करें। परमात्मा तो हर किसी में है, ध्यान के समय किसी और का चिंतन न करें। चेतन का ध्यान करें, जड़ का नहीं। एक ही स्वरूप का बार–बार चिन्तन करें, मन को प्रभु के स्वरूप में स्थिर करने का प्रयास करें। एक ही स्वरूप का बार–बार चिंतन करने से मन और चित्त शुद्ध होता है। परमात्मा के किसी भी स्वरूप को इष्ट मानकर उसका ध्यान करें। ध्यान की परिपक्व अवस्था ही समाधि है। चेतन में इसे जीवन – मुक्त माना गया है। समाधि दीर्घ समय तक रहने से जीते जी मुक्ति का आनंद मिलता है। भगवान के ध्यान में तन्मयता नहीं होगी तो संसार का ध्यान होता रहेगा– उसे छोड़ने का प्रयास करें। ध्यान के प्रारंभ में संसार दिखाई देता है, यह अनुभव हर साधक को होगा। ध्यान में ईश्वर दर्शन न दें, कोई बात नहीं, परन्तु ध्यान में संसार के नर–नारी, संपत्ति का ध्यान नहीं होना चाहिए। ध्यान में तन्मयता होनी चाहिए। प्रभु का चिंतन करना ध्यान है और प्रभु के सर्वांग का चिंतन करना धारणा है। इसी लिए वेदों में कहा गया है कि जो ज्ञानी हैं, जो योगी हैं वे सतत् उस एक परमात्म तत्त्व का ही ध्यान करते हैं। वह एक ही सत्य है और लेकिन यह जगत भी उसी का है। इस एक व्यापक को खोजने की नहीं, पहचानने और अनुभूत करने की आवश्यकता है। उसे पाने के लिए पहले पात्र बनने की, अधिकारी बनने की आवश्यकता है। वह तो संपूर्णता की ओर बाहें फैलाए स्वतः खड़ा है। दो कदम आगे बढ़कर तो देखो। हम सदा सत्य अर्थात प्रभु को अपने निकट रहने का अभ्यास करें और जीवन में आने वाली प्रत्येक परिस्थिति को इस आशा और विश्वास के साथ उन्हीं को समर्पित कर दें कि यह शरीर और जीवन उन्हीं का दिया हुआ है। हमें तो अपना कर्तव्य ईमानदारी से पालन करना है।

–सकरुण कुमार शास्त्री

साहस, सेवा एवं समर्पण के ज्वलन्त उदाहरण– चौधरी चन्द्रभान जी

श्री चन्द्रभान जी चौधरी पुलिस विभाग से डी.सी.पी. के उच्चपद से सेवानिवृत हुए, इस विभाग में कार्यरत रहते हुए भी उनकी छवि निष्कलंक रही, यही कारण है कि आपको राष्ट्रपति पुलिस पदक और पश्चिम स्टार, स्पेशल ड्यूटी पुलिस पदक से सम्मानित किया गया। यह अन्यों के लिए भी अनुकरणीय है।

राष्ट्रसेवा, लोगों के कष्ट निवारण के लिए चौधरी चन्द्रभान जी प्रतिबद्ध ही नहीं रहे, अपितु कटिबद्ध भी रहे, राष्ट्र के प्रति उनकी निष्ठा एक ऐसे व्यक्ति के रूप उन्हें प्रतिष्ठा दे गयी जो प्रलोभन के आगे कभी झुका नहीं और अपनी कर्त्तव्यपरायणता के वेग को इतना गतिशील रखा वह कभी रूका नहीं।

चौधरी चन्द्रभान जी में विनम्रता है, परन्तु दैन्य नहीं। इनमें एक विचित्र सादगी भरा सौजन्य है, जिससे आदमी पहली ही मुलाकात में आत्मीय सा अनुभव करने लगता है।

आर्य समाज बाहरी रिंग रोड़ विकासपुरी से इनका विशेष सम्बन्ध रहा है। इस समाज के वर्षों प्रधान रहे हैं। समाज भवन के निर्माण हेतु देश के कोने–कोने से दान एकत्र कर लाखों रुपये समाज को दिए। वृद्ध एवं बेसहारा लोगों के लिए 'कल्याण कोष' की स्थापना कर के और वह हर माह दान एकत्र करके शुद्धि सभा को देते है। आपने महान कार्य किया है। आज भी श्री चौधरी जी शुद्धि सभा एवं आर्य समाज की गतिविधियों में सक्रिय रूचि लेते हैं।

इनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करते हुए यह आर्यसमाज उन्हें अपना संरक्षक मानते हुए गौरवान्वित हो रहा है।

–श्री हरबंश लाल कोहली जी (का. प्रधान)

राष्ट्र, धर्म व मानवता के सबल रक्षक वेद–यज्ञ–योग साधना केन्द्र

आत्मशुद्धि आश्रम बहादुरगढ़ का

47वां स्थापना दिवस–वार्षिकोत्सव समारोह पर

ऋग्वेद पारायण यज्ञ एवं

निःशुल्क ध्यान योग विज्ञान शिविर

(शनिवार दिनांक 21 सितम्बर से बुधवार दिनांक 2 अक्टूबर 2013 तक)

श्रावणी-सन्देश

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्। -कैलाश चन्द्र शास्त्री

वेद का स्वाध्याय तथा श्रावणी पर्व का सम्बन्ध प्राचीन काल से चला आ रहा है। वेदों की महिमा अपार है। वेद ज्ञान के स्रोत हैं। विश्व को सर्वप्रथम ज्ञान देने का श्रेय वेदों को है। वेद मानव मात्र के लिए प्रकाश स्तम्भ हैं। जहाँ वेदों की ज्योति है, वहाँ प्रकाश है, उन्नति है, सुख है, शान्ति है और सतत विकास है। वेदों का स्वाध्याय प्रत्येक व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व की उन्नति का साधक है, विश्व बन्धुत्व का प्रेरक है और विश्व धर्म का संस्थापक है।

वेदों का स्वाध्याय परम श्रम है, परम तप है, परमधर्म है, परम योग है, परम यज्ञ है, परम रस है, परम दीक्षा एवं सर्वश्रेष्ठ निधि है। ऋषिवर देव दयानन्द लिखते हैं– वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। वेद पाठ करने से आयु, प्राण, प्रजा, पशु, कीर्ति, द्रविण (धन) और ब्रह्म तेज की प्राप्ति होती है। ऋषि याज्ञवल्क्य लिखते हैं– वेद के स्वाध्याय से मनुष्य को 16 लाभ मिलते हैं 1. व्यक्ति मनस्वी हो जाता है। 2. परतन्त्र नहीं होता। 3. न आर्थिक दृष्टि से न अन्तर्दृष्टि के अभाव में कष्ट पाता है। 4. सुख की नींद सोता है। 5. अपना चिकित्सक स्वयं बन जाता है। 6. इन्द्रियसंयमी होता है। 7. परमानन्द में लीन रहता है। 8. प्रज्ञावृद्धि कर लेता है। 9. ब्राह्मणत्व को प्राप्त करता है। 10. उसकी कीर्ति फैलती है। 11. आचरण श्रेष्ठ बन जाता है। 12. एषणाओं से मुक्त हो जाता है। 13. पूजनीय बन जाता है। 14. दानशीलता की प्राप्ति होती है। 15. वह अज्येय हो जाता है। 16. अहिंसा की बृद्धि एवं निर्भयता की प्राप्ति होती है।

वेदों का सार ओ३म् है एवं गायत्री है। जो व्यक्ति ओ३म् का एवं गायत्री का जाप करता है उसे भी वेद पढ़ने का लाभ मिलता है। जो मनुष्य वेद मन्त्रों से यज्ञ में आहुति देता है, नित्य प्रति यज्ञ करता है, उसका मनोबल, बुद्धि बल एवं आत्मिक बल बढ़ता है। उसके समस्त रोग, शोक, कष्ट दूर होते हैं। उसे शान्ति मिलती है। परिवार में सुख बढ़ता है। समाज में यश कीर्ति फैलती है। पाप नष्ट होते हैं, पुण्य बढता है। धन, ऐश्वर्य, मेधा, बुद्धि, आयु, आरोग्यता, समृद्धि, बल, तेज, रक्षा की प्राप्ति होती है। कहा भी गया है–

विख्यात चारों वेद मानो चार सुख के सार हैं,
चारों दिशाओं के हमारे वे जयध्वज चार हैं।
वे ज्ञान गरिमागार हैं, विज्ञान के भाण्डार हैं,
वे पुण्य–पारावार हैं आचार के आधार हैं।

श्रावणी उपाकर्म पारम्परिक एवं प्राचीनतम है। श्रावणी पर्व का विशेष महत्त्व वेदों के अध्ययन के ही कारण है। इस संसार में मनुष्य के पाँच कर्तव्य हैं–

ओ३म् का ध्यान, यज्ञ का अनुष्ठान, वेद का ज्ञान,
संस्कारी सन्तान, राष्ट्रहित बलिदान

आत्मज्ञान तथा ब्रह्मज्ञान की दिव्य धाराओं से ही मनुष्य तृप्त होता है। ज्ञान से जागृति पैदा होती है। जागरूक व्यक्ति ही ईश्वर तथा शान्ति को प्राप्त करता है। वेदों का स्वाध्याय न करने से, आचारहीन हो जाने से एवं आलस्य के कारण मृत्यु शीघ्र आ दबोचती है। जो व्यक्ति वेद के अनुकूल जीवन जीता है वह शताधिक वर्ष की आयु प्राप्त करता है। आइये हम सभी आर्य जन सदैव आस्तिक एवं सात्त्विक चिन्तन करते हुए वेद रूपी गंगा में डुबकी लगायें।

आर्य हमारा नाम है, सत्य हमारा कर्म
ओ३म् हमारा देव है, वेद हमारा धर्म।।

आर्यसमाज राजेन्द्र नगर का श्रावणी पर्व सोल्लास सम्पन्न

आर्यसमाज राजेन्द्र नगर में 24 अगस्त से 28 अगस्त तक अथर्व वेदीय बृहद् यज्ञ के साथ श्रावणी पर्व सोल्लास सम्पन्न हुआ। प्रतिदिन सायंकाल आचार्य अंकित शास्त्री एवं गौरव शास्त्री के सुमधुर भजन हुए एवं उदीयमान युवा वैदिक विद्वान आचार्य कैलाश चन्द्र शास्त्री के वेदोपदेश हुए।

28 अगस्त को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के दिन विशेष कार्यक्रम के साथ प्रति वर्ष की भांति गुरुकुलों के 101 विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदान की गई। डॉ. महेश जी विद्यालंकार, स्वामी विश्वानन्द जी, डॉ. भारद्वाज पाण्डेय जी, आचार्य गवेन्द्र जी एवं आचार्य कैलाश चन्द्र शास्त्री जी के विशेष प्रवचन हुए। मुख्य अतिथि कामरोस संघ के राजदूत श्री के.एल. गंजू जी सपत्नीक उपस्थित होकर बच्चों को आशीर्वाद दिया। एवं छात्रवृत्ति प्रदान की। मंत्री श्री सतीश मैहता जी ने समस्त कार्यक्रम का संयोजन किया एवं आर्यसमाज के प्रधान श्री अशोक सहगल जी ने सभी विद्वानों, कार्यकत्ताओं एवं दानी महानुभावों का धन्यवाद किया। शान्तिपाठ के पश्चात् प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम समाप्त हुआ।

आज की प्रतिज्ञा

* मैं दुःखी नहीं रहूँगा।
* मैं सेवा का कार्य करुँगा।
* मैं परिवार को श्रेष्ठ बनाऊँगा।
* प्रतिदिन कुछ दान पुण्य करुँगा।
* मैं आज एक अच्छा काम करुँगा।
* मैं अपने कर्तव्य का निर्वहन करुँगा।
* मैं वाणी का गलत प्रयोग नहीं करुँगा।
* मैं अपने मनोबल को कमजोर नहीं करुँगा।

भगवान के दिए साधनों का सदुपयोग करुँगा।

* मैं ओ३म् (ईश्वर) को स्मरण करके कार्य करुँगा।
* जो काम जहाँ का है, उस काम को मैं वहीं करुँगा।
* दिनचर्या (भोजन, भ्रमण आदि) को श्रेष्ठ बनाऊँगा।

व्यायाम, यज्ञ, गायत्री एवं स्वाध्याय का अनुष्ठान करुँगा।

सकारात्मक चिन्तन

* मैं ऋषियों की सन्तान हूँ।
* मेरी गौरवशाली परम्परा है।
* मेरा घर परिवार मेरे साथ है।
* मुझे जिन्दगी से कोई शिकायत नहीं है।
* मेरा जीवन मधुरता, सात्विकतापूर्ण है।
* मैं परिपक्व हूँ, समर्थ हूँ, सब मेरे मित्र हैं।
* मैं वेद भक्त, ऋषि भक्त, एवं देशभक्त हूँ।
* मैं संसार का सबसे सौभाग्यशाली व्यक्ति हूँ।
* मैं स्वस्थ हूँ, निरोगी हूँ, मेरी आयु सौ वर्ष की है।
* यह जीवन प्रभु का दिया हुआ सबसे बड़ा उपहार है।
* मुझ पर सदैव प्रभु की कृपा है। मैं करोड़ों लागों से श्रेष्ठ हूँ।
* मुझे यह जीवन श्रेष्ठ उद्देश्य एवं श्रेष्ठ कार्य के लिए मिला है।
* मैं शक्तिपुंज हूँ, ज्योतिपुंज हूँ, मेरी शक्तियाँ एवं प्रतिभा अनन्त हैं।

मेरा कल बहुत अच्छा था, आज भी है एवं भविष्य भी बहुत अच्छा होगा।

* प्रभु आपका शुक्रिया है।।

(जीवन को श्रेष्ठ बनाने के लिए, ऋषि दयानन्द का अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश अवश्य पढ़ें)

– आचार्य अंकित शास्त्री

आर्य उप प्रतिनिधि जनपद हापुड़ का प्रथम अधिवेशन सम्पन्न

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के निर्देशानुसार 4 अगस्त 1913 को पिलखुवा आर्य समाज के विशाल भवन में स्वामी धर्मेश्वरानन्द जी (मंत्री सभा) की अध्यक्षता में तथा सत्यवीर सिंह जी (चुनाव अधिकारी) की देख रेख में सर्वसम्मति से प्रथम अधिवेशन सम्पन्न हुआ। जिसमें डा. विकास आर्य (हापुड़) प्रधान, अशोक कुमार आर्य, मंत्री (पिलखुवा) ज्ञानेन्द्र आर्य कोषाध्यक्ष (जरौठी) को तालियों की गड़गडाहट के साथ सर्वसम्मति से चुना गया।

प्रो. (डॉ.) सुन्दरलाल कथूरिया की महत्त्वपूर्ण कृति 'अद्यतन हिन्दी-कविता: नये संदर्भ' लोकार्पित

अखिल विश्व गायत्री परिवार, शांतिकुंज, हरिद्वार के तत्त्वावधान में, भारतीय संस्कृति ज्ञान परीक्षा (पश्चिमी दिल्ली) की ओर से आर्य समाज, जनकपुरी के विशाल सभागार में लोकार्पण, संगाष्ठी एवं सम्मान समारोह का भव्य आयोजन किया गया। समारोह के दौरान मूर्धन्य समालोचक एवं भावनगर विश्वविद्यालय, भावनगर, गुजरात के हिन्दी–विभाग के पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया की हाल ही में प्रकाशित पुस्तक 'अद्यतन हिन्दी–कविता: नये संदर्भ' का लोकार्पण भी किया गया।

डॉ. कथूरिया एवं अन्य विद्वानों को भी इस अवसर पर शाल, पुष्पगुच्छ, ग्रंथादि भेंटकर सम्मानित किया गया। समारोह में आचार्य चन्द्र शेखर शास्त्री, डॉ. देवराज पथिक, श्री जंगबहादुर तथा बहुत बड़ी संख्या में प्राचार्य, अध्यापक, छात्र, साहित्यकार एवं पत्रकार उपस्थित थे। संयोजक श्री के.एल. सचदेवा ने सभी का धन्यवाद किया।

–खैरातीलाल

R.N.I. No. 43084/76 Posting Date : 2-3 Every Month Delhi Postal R.No. DL (N) 060/2012-

सेवा में,

शुद्धि समाचार

सितम्बर – 2013

शुद्धि संस्कार

८६–ईसाई भाई बहिनों की घर वापसी

जहाँ एक ओर वैदिक संस्कृति के ह्रास करने को मतों के अन्धानुयायी शिष्यों ने कुचक्र चलाया है वहीं वैदिक धर्म के प्रवल समर्थकों ने भी ग्रामों व नगरों में जा जाकर विकृति को दूर करने का सतत प्रयास किया है।

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के प्रचारक प्रणव शास्त्री द्वारा संकल्प लिया गया है कि प्रत्येक माह में कम से कम दो या अधिक ग्रामों को मत पंथ का परित्याग कराकर शुद्ध वैदिक संस्कृति से जोड़ना है। इसी क्रम में ग्राम अढ़ौली में डा रामशंकर आर्य के सहयोग से धर्म दीक्षा कार्यक्रम सम्पन्न हुआ जिसमें 45 स्त्री 20 पुरुषों एवं 24 बच्चों ने भाग लिया, सभी ने सहर्ष यज्ञ में आहुति देकर अपने को धन्यवाद किया हम मिश्नरी के वहकावे में आकर उनके जाल में फंसे थे।

प्रणव शास्त्री के अनथक प्रयास से यह पावन कार्य राष्ट्र, धर्म, संस्कृति को बचाते हुए मानव सभ्यता को बचाने का संकल्प है। उत्तर प्रदेश के रुहेलखण्ड क्षेत्र में व्यापक स्तर पर यह कार्य होना है जिसे चिह्नित कर प्रणव शास्त्री व उनके सहयोगी तन, मन, से करेंगे।

अढ़ौली में धर्म दीक्षत यज्ञ में विशेष रूप से इन्द्र मुनि वानप्रस्थी, विश्व मुनि वानप्रस्थी, शेखर आर्य , प्रतिपाल शाक्य, कमला देवी, वेदप्रभा उपस्थित रहीं शुद्धि सभा द्वारा तीन सत्यार्थ प्रकाश, 10 लघु सत्यार्थ प्रकाश कुछ आर्य धार्मिक ट्रेक्ट वितरण किये गये।

–प्रणव शास्त्री (प्रचारक)

सुन्दरगढ़ में विश्वशांति महायज्ञ एवं शुद्धि कार्यक्रम सोल्लास सम्पन्न

गत 14.07.13 को भूकनपड़ा ग्राम में एक विशाल शुद्धि कार्यक्रम पूज्य स्वामी धर्मानन्द सरस्वती प्रधान उत्कल आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्षता में किया गया। जिसमें 200 से अधिक परिवारों ने यज्ञ में आहुति देकर ईसाइयत को छोड़ पुनः वैदिक धर्म की दीक्षा ली तथा "वैदिक धर्म ही हमारा धर्म है, बाकी सब मतवाद है।" संकल्प लेकर दुबारा ईसाई न बनने का संकल्प लिया।

इस महायज्ञ में श्री पं. विशिकेशन वानप्रस्थी, श्री वासुदेव होता ने यज्ञ का संचालन किया, स्वामी व्रतानन्द जी, स्वामी नारदानन्द जी, श्री सुरेश अग्रवाल, श्री सहदेव जाल, स्थानीय पंचायत समिति के मेम्बर, वार्ड मेम्बर तथा आसपास से हजारों सज्जनों ने बड़ी श्रद्धा के साथ इस कार्यक्रम में भाग लिया।

अन्त में नवदीक्षित परिवारों को स्वामी व्रतानन्द जी के करकमलों से नई साड़ी एवं धोती प्रदान किया गया। अन्त में सभी विद्वानों ने आशीर्वचन प्रदान किया।, शान्ति पाठ के पश्चात् प्रीतिभोज उपरान्त कार्यक्रम सोल्लास सम्पन्न हुआ।

– आचार्य रणजीतार्य 'विवित्सु'

आर्य समाज कैलाश–ग्रेटर कैलाश–1 (पंजी)

आर्य समाज कैलाश–ग्रेटर कैलाश–1 की साधारण सभा का वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न हुआ।

1. श्री इन्द्र सेन साहनी – प्रधान
2. श्री राजेन्द्र कुमार वर्मा– मंत्री
3. श्री प्रताप गुलयानी – कोषाध्यक्ष

लेखकों से निवेदन

कृपया अपना लेख एवं कविता राष्ट्र, धर्म, वेद, दयानन्द, आर्यसमाज स्वतन्त्रता, स्वामी श्रद्धानन्द, स्त्री शिक्षा तथा अन्य समसामयिक विषयों पर ही भेजें। लेख एवं कविता वैदिक सिद्धान्त के अनुकूल, एवं मौलिक हों। फोण्ट के साथ अथवा पीडिएफ के साथ लेख ई–मेल द्वारा भी भेज सकते हैं–

(i) kailashchandraskt@gmail.com
(ii) raj.japmeet@gmail.com
(iii) sr.arya1408@gmail.com

माह अगस्त–2013 के आर्थिक सहयोगी

श्रीमती सरोज सहगल एवं सहगल परिवार राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली (स्व.श्री सुरेन्द्र सहगल जी की पुन्य स्मृति में दान)		5000/–
श्रीमती स्वतन्त्रलता शर्मा जी, पांचवां क्रास, वसन्त नगर, बैंगलौर	त्रैमासिक	1000/–
आर्य समाज सिविल एरिया बैंगलौर ट्रस्ट, इन्दिरा नगर, बैंगलौर	मासिक	1000/–
आर्य समाज अनारकली मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली	मासिक	1000/–
ब्रिगेडियर के.पी. गुप्ता जी, सैक्टर–15, फरीदाबाद	मासिक	1000/–
श्री नरेन्द्र मोहन वलेचा जी महामंत्री, शुद्धि सभा	मासिक	500/–
श्री एल. वी. जावेदकर, धुले महाराष्ट्र		200/–
श्री आर.एस. शर्मा जी, इन्द्रानगर गाजियाबाद		200/–
श्री जयन्त बल्लम दास कोटेचा, पोरबन्दर गुजरात	मासिक	100/–

श्री शिवशंकर लाल जी वैश्य (अलीगंज लखनऊ) ने शुद्धि समाचार को 5 आजीवन सदस्य बनाये।

श्रीमती विमला शुक्ला जी, सैक्टर–ऐ, स्टेट बैंक कालौनी, अलीगंज, लख.	300/–
श्री चौधरी रणवीर सिंह जी (प्रधान) आर्य समाज सीतापुर उ.प्र.	300/–
श्री महेश्वर प्रसाद वैश्य जी, लोहामंडी, तानसेन गंज, सीतापुर उ.प्र.	300/–
श्री पी.एन. वैश्य जी, जानकीपुरम् विस्तार, लखनऊ	300/–
श्रीमती नीलम श्रीवास्तव जी, सै.–ऐ, अलीगंज, जानकीपुरम् लखनऊ	300/–

श्री सुरेन्द्र सहगल जी को भावभीनी श्रद्धांजलि

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा के पूर्व प्रधान स्व. द्वारकानाथ सहगल जी के ज्येष्ठ पुत्र श्री सुरेन्द्र सहगल जी का दिनांक 22.8.2013 को देहान्त हो गया। स्व. सुरेन्द्र जी राजेन्द्र नगर आर्यसमाज के प्रधान श्री अशोक सहगल जी एवं आर्य सत्याग्रही स्व. सुभाष सहगल जी के बड़े भाई थे।

24 अगस्त को आर्यसमाज राजेन्द्र नगर में श्रद्धांजलि सभा हुई जिसमें कई आर्य समाजों के प्रतिनिधियों ने तथा डॉ. भारद्वाज पाण्डेय, आचार्य गवेन्द्र जी, आचार्य श्यामदेव जी, आचार्य कैलाश चन्द्र शास्त्री, डॉ. अशोक चौहान, निगम पार्षद राजेश भाटिया आदि गणमान्य लोगों ने उन्हें श्रद्धासुमन अर्पित किये। परिवार ने स्व. सुरेन्द्र जी की स्मृति में 1,50000/– रुपये विभिन्न आर्यसंस्थाओं को दान दिया। शुद्धि सभा को सहगल परिवार का सहयोग सदैव मिलता रहता है।

भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा दिवंगत पुण्यात्मा की शान्ति के लिए प्रभु से प्रार्थना करती है।

– नरेन्द्र वलेचा (महामन्त्री)

शोक समाचार

श्रीमती आशा जोगलेकर "पूर्व प्रधाना" आर्य स्त्री समाज रामकृष्णपुरम् सैक्टर–9, नई दिल्ली का गत 22–8–2013 को निधन हो गया श्रीमती जोगलेकर आर्य समाज के सभी गतिविधियों में बढ़ चढ़ कर भाग लेती थी। श्रद्धा व समर्पण भाव से शुद्धि सभा के सभी सदस्यों एवं आर्य समाज के सभी सदस्यों की ओर से विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ और परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वह उन्हे अपने चरणों में स्थान दें।

–हरबंश लाल कोहली

पुरोहित की आवश्यकता

दिल्ली की सुप्रसिद्ध आर्य संस्था आर्य समाज राजेन्द्र नगर को एक सुयोग्य पुरोहित की आवश्यकता है। गुरुकुल के स्नातक एवं अनुभवी विद्वान को वरीयता दी जायेगी। आवास की उत्तम व्यवस्था है। इच्छुक विद्वान अपना संक्षिप्त विवरण एवं कार्य अनुभव लिखकर भेजें।

–मन्त्री
आर्यसमाज राजेन्द्र नगर
निकट राजेन्द्र प्लेस मेट्रो स्टेशन, नई दिल्ली–60
दूरभाष : 011– 25760006

मुद्रक, व प्रकाशक – रामनाथ सहगल द्वारा गुरमत प्रिंटिंग प्रेस, 1337, संगतरासन, पहाड़ गंज, नई दिल्ली–55 दूरभाष : 23561625, से मुद्रित एवं भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, 6949, बिड़ला लाइन दिल्ली–7 दूरभाष : 23847244 से प्रकाशित। कार्यकारी सम्पादक : कैलाश चन्द्र शास्त्री, सम्पादक : डा. भारद्वाज पाण्डेय